SHODH SAMAGAM

ISSN : 2581-6918 (Online), 2582-1792 (PRINT)

बिहार के प्राचीन शिक्षा केन्द्र नालन्दा विश्वविद्यालय

एस. एस. अली अख्तर, Ph.D., इतिहास विभाग
मगध विश्वविद्यालय, बोध गया, बिहार, भारत

ORIGINAL ARTICLE

Author
एस. एस. अली अख्तर, Ph.D.

shodhsamagam1@gmail.com

Received on : 28/12/2023
Revised on : -----
Accepted on : 29/02/2024
Overall Similarity : 09% on 21/02/2024

Plagiarism Checker X - Report
Originality Assessment
Overall Similarity: **9%**
Date: Feb 21, 2024
Statistics: 241 words Plagiarized / 2559 Total words
Remarks: Low similarity detected, check with your supervisor if changes are required.

शोध सार

भारत के प्राचीनतम विश्वविद्यालय की शृंखला में नालन्दा विश्वविद्यालय का नाम बड़े ही आदर के साथ लिया जाता है। शिक्षा का यह प्राचीन केन्द्र आज बिहार प्रान्त के नालन्दा जिले में स्थित है। इस शिक्षा केन्द्र की स्थापना गुप्त शासक कुमार गुप्त प्रथम द्वारा किया गया था। इस विश्वविद्यालय में सिर्फ मेधावी छात्रों का ही नामांकन संभव था। पूरे विश्व में इस प्राचीन शिक्षा केन्द्र का नाम था। चीनी यात्री ह्वेनसांग ने अपना कुछ समय यहाँ व्यतीत कर शिक्षा ग्रहण किया था। इस विश्वविद्यालय में चीन, तिब्बत, स्याम व विश्व के अन्य क्षेत्रों से छात्र विद्या अध्ययन करने आते थे। यहाँ से उत्तीर्ण छात्र भारत की संस्कृति का प्रचार–प्रसार अपने देशों के साथ–साथ अन्य देशों में करते थे। मूलतः बौद्ध महायान शाखा में व्याकरण, ज्योतिष, गणित, तर्कशास्त्र व विज्ञान की अनेक शाखाओं की पढ़ाई होती थी। साथ ही पालि, प्राकृत एवं प्राचीन भारतीय एवं एशियाई अध्ययन की शिक्षा दी जाती थी। कालांतर में पूर्वमध्यकाल की विषम परिस्थितियों ने इस विश्व ख्याति प्राप्त शिक्षा के केन्द्र को ध्वस्त (नष्ट) कर दिया।

मुख्य शब्द

नालन्दा, विश्वविद्यालय, ह्वेनसांग, कुमारगुप्त, पुस्तकालय, द्वारपाल.

भूमिका

वर्तमान बिहार में स्थित नालन्दा विश्वविद्यालय का ख्याति प्राचीन काल से ही पूरी दुनिया में प्रतिष्ठित है। यह स्थल पटना से दक्षिण करीब 40 मील और राजगीर से उत्तर करीब 8 मील की दूरी पर स्थित है। ऐसे मूलतः यह स्थल आधुनिक बड़गाँव नामक गाँव में है, जिसकी खोज अलेक्जेंडर कनिंघम द्वारा किया गया था। प्रारंभ में यह बौद्ध विहार था, कालांतर में एक विश्वविद्यालय के

रूप में इसका विकास हुआ। इस विश्वविद्यालय का श्रेय कुमार गुप्त प्रथम (415–455 ई.) प्राप्त को हुआ।[1] चीनी यात्री ह्वेनसांग तथा इत्सिंग के यात्रा विवरणों से इस विश्वविद्यालय की जानकारी मिलती है। कुमार गुप्त प्रथम ने इस बौद्ध संघ को पहला दान दिया था।[2] स्थापना के बाद कई शासकों का समर्थन इस विश्वविद्यालय को मिला। ह्वेनसांग से इस बात की जानकारी मिलती है कि 470 ई. में गुप्त सम्राट नरसिंह गुप्त बालादित्य ने नालन्दा में एक सुन्दर मंदिर का निर्वाण करवाया जो 80 फुट ऊँची ताम्र की बुद्ध प्रतिमा है। ह्वेनसांग ने शक्रादित्य को इस विश्वविद्यालय का संस्थापक बताया है। शक्रादित्य की पहचान गुप्त शासक कुमार गुप्त प्रथम के रूप में किया गया है। उसके बाद उनके उत्तराधिकारियों और राजाओं ने अनेक विहारों और विश्वविद्यालय को हर्षवर्द्धन और पाल शासकों का भी संरक्षण प्राप्त था। इसके विकास के लिए देशी और विदेशी के साथ ही स्थानीय गाँवों का भी आर्थिक अनुदान मिला। हर्षकाल तक नालन्दा महाविहार ने अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर ख्याति प्राप्त कर लिया था। भगवान बुद्ध के जीवनकाल से संबंधित यह स्थल अतिशीघ्र एक ख्याति प्राप्त शैक्षणिक केन्द्र का दर्जा ले लिया था। इस महानतम् विश्वविद्यालय की गरिमा को समाप्त करने के लिए 1303 ई. में बख्तिार खिलजी ने इस पवित्र शिक्षा केन्द्र को विध्वंस कर दिया।

साहित्यावलोकन

नालन्दा विश्वविद्यालय के उच्च शिक्षा की ख्याति ने ही भारत को विश्व गुरू होने का अवसर प्रदान किया। यह की सांस्कृतिक परम्परा अपने–आप में महत्वपूर्ण है। प्रस्तुत शोध–पत्र का उद्देश्य उन परिस्थितियों की समीक्षा करना है जिन्होंने नालन्दा विश्वविद्यालय को तत्कालीन शैक्षणिक जगत के शीर्ष आयाम के रूप में प्रतिष्ठित किया।

नालंदा विश्वविद्यालय को प्रकाश में लाने का श्रेय भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण को जाता है। भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण ने समय समय पर अपने वेबसाइट व विभिन्न पत्रिकाओं के माध्यम से नालंदा महाविहार से सम्बन्धित जानकारी को अद्यतन किया है। वैसे तो ह्वेनसांग ने अपने यात्रा वृतांत में नालंदा की शिक्षा व्यवस्था पर काफी कुछ लिख छोड़ा है और उसके बाद आने वाले कतिपय अन्य विदेशी यात्रियों ने भी नालंदा की महत्ता का गुणगान किया है जिनके अवतरणों का बील व वाटर्स जैसे विद्वानों ने अंग्रेजी में अनुवाद कर अनेकानेक महत्वपूर्ण जानकारियाँ उपलब्ध कराई हैं किन्तु अन्य आधुनिक भारतीय व पाश्चात्य विद्वानों ने भी इस क्षेत्र में अथक प्रयत्न किये हैं। ए. एस. अल्टेकर महोदय ने अपनी पुस्तक 'एजुकेशन इन एन्सिएंट इंडिया ' में नालंदा की शिक्षा पद्धति पर पर्याप्त प्रकाश डाला है। आपने बताया है कि किस प्रकार यहाँ शैक्षणिक गतिविधियाँ संचालित की जाती थीं। राधा कुमुद मुकर्जी ने 'एन्सिएंट इंडियन एजुकेशनरू ब्राह्मनिकल एंड बुद्धिस्ट' में इसके महत्व पर प्रकाश डाला है। हीरानंद शास्त्री ने भी 'नालंदा एंड इट्स एपीग्राफिक मटेरिअल' में नालंदा महाविहार के बारे में महत्वपूर्ण जानकारियाँ उपलब्ध कराई हैं। नालंदा की शिक्षा प्रणाली पर महत्वपूर्ण कार्य सुरेश कांत शर्मा (इन्साइक्लोपीडिआ ऑफ हायर एजुकेशन हिस्टोरिकल सर्वे प्री इंडिपेंडेंस पीरियड), लाल मणि जोशी (स्टडीज इन दी बुद्दिस्टिक कल्चर ऑफ इंडिया ड्यूरिंग दी सेवेंथ ऐंड एर्थ सेंचुरीज ए.डी.), अमलानंद घोष (ए गाइड टू नालंदा), एलेक्स वेमैन (बुद्धिस्ट इनसाइटः एस्सेज), क्रिसमस हम्प्रेज (दी विजडम ऑफ बुद्धिज्म) आदि विद्वानों ने किया है। प्रस्तुत शोध पत्र के लेखन में वर्ष 2011 तक के सन्दर्भ ग्रंथों का प्रयोग किया गया है, इसके बाद के सन्दर्भ ग्रन्थ लेखक को प्राप्त नहीं हुए हैं।

बौद्ध ग्रंथों से से प्राप्त विवरणों के आधार पर नालंदा विश्वविद्यालय का क्षेत्रफल एक मील लम्बा तथा आधा मील चौड़ा प्रतीत होता है। इसके चारों ओर एक चहारदीवारी[3] थी और बीच में विभिन्न राजाओं द्वारा निर्मित कराए हुए विहार। इसके भवनों को चार भागों में विभाजित किया जा सकता है। कुछ भवन ऐसे हैं जो विद्यार्थियों के लिए बने थे। दूसरे प्रकार के भवन विद्याध्ययन के लिए बनाए गए थे। तीसरे प्रकार के भवन भिक्षुओं के लिए बने थे और चौथे प्रकार के भवन धार्मिक भवनों की श्रेणी में परिगणित किए जा सकते हैं। विद्याध्ययन भवन में तीन सौ छोटे–छोटे कमरे थे जहाँ विद्यार्थी अपने गुरुओं के चरणों में बैठकर शिक्षा प्राप्त करते थे। विदेशी यात्रियों के विवरण के अनुसार नालन्दा विश्वविद्यालय में शिक्षकों व छात्रों के रहने की उत्तम व्यवस्था थी। विश्वविद्यालय क्षेत्र में चातुर्दिक बौद्ध आचार्यों, पुरोहितों और प्रचारकों के निवास के लिए चार मंजिलों वाले भवन थे। यहाँ आठ बड़े सभागृहों का निर्माण

किया गया था जहाँ समय–समय पर सामूहिक रुप से शिक्षा और विविध विषयों पर विचार गोष्ठियों एवं व्याख्यानों का आयोजन होता था क्योंकि विश्व के विभिन्न क्षेत्रों के विषयों के उद्‌भट विद्वान यहाँ अपनी समस्याओं का समाधान करने के लिए आते थे।[4] सभा भवन कई मंजिल वाले तथा इतने ऊँचे होते थे कि इनका शिखर गगन को चूमता था।[5] यहाँ मठों के पड़ोस में सुन्दर तालाब कमल फूलों से सुशोभित होते रहते थे। श्रमण आवास के मकराकृत बार्जे, रंगीन ओलतियाँ, सुसज्जित एवं चित्रित मोती के समान लाल स्तम्भ, सुअलंकृत लघु स्तम्म तथा खपड़ों से ढकी हुई छतें जो सूर्य का प्रकाश सहस्त्रों रुप में प्रतिबिम्बित करती थीं ये सभी बिहार की शोमा को बढ़ा रही थीं।[6] नालंदा में करीब बारह मीटर ऊँचा एक भव्य बौद्ध मंदिर या केन्द्रीय देवालय था जिसमें लगभग चौबीस मीटर ऊँची विशाल बौद्ध प्रतिमा थी। नालंदा विश्वविद्यालय में 'धर्मगंज' नामक एक विशाल पुस्तकालय था जो 'रत्नोदधि' 'रत्नसागर' और 'रत्नरंजक' नामक तीन बहुमंजिला भवनो से मिलकर बना था और विभिन्न विभिन्न धार्मिक व तांत्रिक ग्रंथों का संरक्षक था।[7]

मूलतः नालंदा महाविहार की स्थापना बुद्ध की शिक्षा व बौद्ध धर्म के प्रसार के लिए की गयी थी। कालान्तर यहाँ बौद्धों के विभिन्न संप्रदायों के ग्रंथों के अनुशीलन के अतिरिक्त विभिन्न धर्मों के शास्त्रों और दार्शनिक ग्रंथों का अध्ययन किया जाने लगा। नालन्दा का यश गौरव इतना बढ़ गया था कि भारत के विभिन्न प्रदेशों के ही नहीं अपितु लंका, तिब्बत, मंगोलिया, चीन, कोरिया, जावा (दक्षिणी–पूर्वी एशिया) और दूर–दूर देशों के विद्यार्थी यहाँ शिक्षा ग्रहण करने हेतु आते थे। ह्वेनसांग, इत्सिंग, हिएनचिन, चेहांग, हुईन्येह, आर्यवर्मन आदि चीनी–कोरियाई विद्वान नालन्दा में आए और विद्याध्ययन किया। यहाँ के प्रख्यात आचार्यों में शीलभद्र धर्मपाल, चन्द्रपाल शान्तिरक्षित, गुणमति, स्थिरमति, प्रभाकरमित्र, अंग, भद्रसेन, दिमनांग, ज्ञानचन्द्र, नागार्जुन, वसुबन्धु, असंग, धर्मकीर्ति आदि थे। ह्वेनसांग के भारत आगमन के समय नालन्दा में दस हजार आचार्य और विद्यार्थी निवास कर रहे थे।

नालन्दा विश्वविद्यालय के कुलपति शीलभद्र अपने समय के अद्वितीय विद्वान थे जिनके चरणों पर बड़े–बड़े सम्राट भी नतमस्तक होते थे। शातिरक्षित को तिब्बत के नरेश ने अपने राज्य में बौद्ध धर्म के विकास और प्रचार के लिए आमन्त्रित किया और 'आचार्य बोधिसत्व' की उपाधि प्रदान की कुछ समय पश्चात कमलशील अविशा, स्थिरमति, बुद्धकीर्ति भी तिब्बत गए। चन्द्रगोमिन के ग्रंथों का तिब्बती भाषा में अनुवाद किया गया। चीन में बौद्ध धर्म का प्रचार–प्रसार करने के लिए नालन्दा से जाने वाले विद्वानों में कुमारजीव, परमार्थ, सुधाकर सिंह, धर्मदेव आदि का नाम प्रमुख थे।

गुप्तकाल में ही नालंदा विश्वविद्यालय शिक्षा का बड़ा केन्द्र बन चुका था। गुप्त राजाओं ने कई पीढ़ियों तक इसके व्यय के लिए अनेक गांवो की आय दान में दी थी। इसमें प्रवेश पाना अत्यन्त दुष्कर था। इसमें हजारों विद्यार्थी शिक्षा पाते थे। ये विद्यार्थी धन, संपत्ति, यश–अपयश की परवाह न करके सदा ज्ञान–प्राप्ति में लगे रहते थे। वे सादगी और सदाचार का जीवन व्यतीत करते थे। यह विश्वविद्यालय मूलतः महायान संप्रदाय की शिक्षा का केन्द्र था किन्तु इस संस्थान में वेद, तर्कशास्त्र, आयुर्वेद, अथर्वविद्या और सांख्यदर्शन की शिक्षा का भी उचित प्रबंध था।[8]

नालन्दा विश्वविद्यालय में प्रविष्ट छात्रों को निवास, वस्त्र, चिकित्सा और अध्ययन की सुविधा निःशुल्क प्रदान की जाती थी। वहीं 10 हजार विद्यार्थीगण तथा 1500 सौ से अधिक आचार्य, शिक्षक तथा विद्वान निवास करते थे। इन सभी के जीवन यापन के लिए नालन्दा विश्वविद्यालय को राजाओं, सम्राटों और धनसंपन्न व्यक्तियों द्वारा अतुलनीय सम्पत्ति दान में दी जाती थी। विश्वविद्यालय का खर्च चलाने के लिए राज्य की ओर से भूमि भी प्रदान की गयी थी। इत्सिंग के अनुसार नालन्दा को 200 सौ से अधिक ग्रामदान मिले थे। इनसे प्राप्त उपज की आय से विश्वविद्यालय का खर्च चलता था। ह्वेनसांग ने लिखा है कि उसने विश्वविद्यालय के लिए पार्श्ववर्ती गाँवों से प्रतिदिन अनेक बैलगाड़ियों में चावल और दुग्धशालाओं से मक्खन और दूध आते हुए देखा है। विद्यार्थियों के भोजन के लिए मुख्यतया चावल दिया जाता था और प्रति माह घी, तेल और अन्य खाद्य पदार्थ भी निश्चित मात्रा में दिये जाते थे। अतिथियों को भी इसी प्रकार निःशुल्क भोजन दिया जाता था। इस विश्वविद्यालय में प्रवेश पाने हेतु विद्यार्थी को द्वार पण्डित द्वारा ली जाने वाली जटिल प्रवेश परीक्षा में उत्तीर्ण होना अनिवार्य था। ह्वेनसांग के अनुसार दस में से दो

या तीन विद्यार्थी ही प्रवेश परीक्षा में उत्तीर्ण हो पाते थे। प्रवेश परीक्षा में उत्तीर्ण होने के लिए व्याकरण, हेतु–विद्या (न्याय) और अभिधम्म कोष का ज्ञान अनिवार्य था। विश्वविद्यालय में रहकर अध्ययन करने वाले विद्यार्थी श्रमसाध्य जीवन व्यतीत करते थे जिनके शिक्षा पूर्ण होने पर बाहर जाने पर उनके ज्ञान और पाण्डित्य का सर्वत्र आदर होता था। विश्वविद्यालय के नियम व उपनियम अत्यन्त कठोर होते थे। सदाचार, नैतिकता व अनुशासनबद्ध उनके जीवन के महत्वपूर्ण अवयव हो जाते थे। उनका दिन अध्ययन और बाद–विवाद में व्यतीत हो जाता था। बड़े और छोटे सभी परस्पर पूर्ण ज्ञान की प्राप्ति में सहयोग और सहायता देते थे।[9] प्रबन्ध व्यवस्था हेतु नालन्दा विश्वविद्यालय एक संघबद्ध संस्था थी। इसमें सभी महाविद्यालय और विहार भी संघ के समान कार्य करते थे। इस विश्वविद्यालय के प्रवन्ध व्यवस्था को दो खण्डों में विभाजित किया गया था–आन्तरिक एवं वाह्य। इन दोनों के कार्यों के लिए दो सभाएँ बनायी जाती थीं। इन सभाओं के लिए ऊपर का अधिकारी मठाधीश था। यही कुलपति होता था। यह विद्वता के आधार पर नियुक्त किया जाता था।[10] प्रत्येक के संचालन और व्यवस्था के लिए एक परिषद या कार्यकारिणी होती थी। महाविद्यालय के अधिकारियों में द्वार पण्डित (शिक्षार्थियों की प्रवेश परीक्षा लेने वाला) धर्मकोश (कुलपति), कर्मदान (उपकुलपति), स्थावर आदि होते थे। प्रत्येक महाविद्यालय और विहार की अपनी मुद्रा या सील होती थी। इन मुद्राओं पर प्रायः 'धर्मचक्र' उत्कीर्ण होता था। ऐसी अनेक मुद्राएँ उत्खनन से प्राप्त हुई हैं। ऐसी ही एक मुद्रा पर अंकित है–'श्री नालन्दा–महाविहार आर्य–भिक्षु–संघव्य' अर्थात् प्रतिष्ठित नालन्दा विश्वविद्यालय की संचालन परिषद का।[11] युआनच्वांग ने लिखा है कि यहाँ के शिक्षक और विद्यार्थी पढ़ने और वाद–विवाद करने में इतने व्यस्त रहते थे कि प्रतिदिन पढ़ाई के आठ घंटे उन्हें बहुत कम जान पड़ते थे। जो विद्यार्थी अनुशासन के व्यावहारिक नियमों की अवलेहना करते थे, उन्हें दण्ड दिया जाता था। इस विश्वविद्यालय में प्रसिद्ध स्नातकों की संख्या बहुत अधिक थी।[12] इत्सिंग के अनुसार तीन हजार से अधिक विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त करते थे। अध्यापकों की संख्या लगभग एक हजार पाँच सौ थी जिसमें से लगभग सौ प्रतिदिन व्याख्यान देते थे।[13] तिब्बत के ऐतिहासिक साधनों से ज्ञात होता है कि नालंदा विश्वविद्यालय में आठ महाविद्यालय थे। इस विश्वविद्यालय का पहला कुलपति कांची का निवासी धर्मपाल नामक विद्वान था। उसके बाद संभवतः असम का निवासी शीलभद्र कुलपति हुआ।

यहाँ मुख्य रूप से महायान संप्रदाय के अट्ठारह शाखाओं के सिद्धान्तों की शिक्षा दी जाती थी। साथ ही चारों वेद, छः वेदांग, पुराण, न्यायमीमांसा, धर्मशास्त्र, धनुर्वेद, गंधर्ववेद, अर्थशास्त्र, नाट्यशास्त्र, चित्रकला, विज्ञान, फलित ज्योतिष, कुक्कुट विज्ञान, अश्व विद्या, हस्तविद्या, राजनीति, विज्ञान, गणित ज्योतिष, व्याकरण, गणित, आत्मज्ञान, हेतुविद्या (तर्कशास्त्र), शब्दविद्या (व्याकरण), चिकित्सा विज्ञान (आयुर्वेद), हेतुविद्या (तर्कशास्त्र), शब्दविद्या (व्याकरण), चिकित्सा विज्ञान (आयुर्वेद), अथर्ववेद (मंत्रविद्या) और सांख्य दर्शन भी पढ़ाए जाते थे। इस विश्वविद्यालय में आध्यात्मिक और ऐहिक दोनों प्रकार के विषय पढ़ाए जाते थे। इस प्रकार सभी सम्प्रदायों, धर्मों और व्यक्तियों के लिए यह खुल गया। यहाँ ज्ञान प्राप्त करने की समस्त सुविधाएँ और स्वतन्त्रता थी। नालन्दा कोई धार्मिक, साम्प्रदायिक या वर्गीय महाविद्यालय या विद्यापीठ नहीं थी। एक विशिष्ट सम्प्रदाय या धर्म से इसका सम्बन्ध नहीं था अपितु यह यथार्थ में एक विश्वविद्यालय था, जिसमें स्नातकोत्तर महाविद्यालय थे, जहाँ सम्पूर्ण बौद्ध साहित्य व दर्शन के अतिरिक्त बौद्धेतर साहित्य का भी विषद अध्ययन होता था।[14] आठवीं सदी तक नालन्दा अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त कर चुका था, परन्तु ग्यारहवीं सदी में पाल शासकों द्वारा विक्रमशिला विश्वविद्यालय को प्रोत्साहन देने व उसके अत्यधिक विकास से तथा बारहवीं सदी में तुर्कों के भयंकर आक्रमण और अमानुशिक प्रहारों से यह विश्वविद्यालय नष्ट भ्रष्ट हो गया। नालन्दा विश्वविद्यालय के पतन ने भारत में बौद्ध धर्म के पतन को प्रोत्साहित किया।

निष्कर्ष

इस प्रकार स्पष्ट है कि अपने जीवनकाल में नालन्दा विश्वविद्यालय भारत का ज्ञान भण्डार ही नहीं, अपितु विश्व में ज्ञान–विज्ञान का पथ प्रदर्शक भी हो गया। इस प्रकार नालन्दा प्राचीन शिक्षा का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण केन्द्र था जिसकी ख्याति न केवल भारत अपितु विदेशों में भी व्याप्त थी। वस्तुतः यह एक विश्वभारती था जहाँ से सम्पूर्ण देश में संस्कृति का प्रसार होता था। यहाँ के विद्वानों की महानता, उदारता एवं पाण्डित्य के परिणामस्वरुप नालन्दा का नाम ही तत्कालीन विश्व में विद्या के सर्वोच्च एवं सर्वोत्तम गुणों का पर्याय के रूप में स्थापित है। आज वर्त्तमान

में भी नालन्दा विश्वविद्यालय की गरिमा को अक्षुण्य बनाये रखने के लिए बिहार सरकार ने प्राचीन नालन्दा विश्वविद्यालय के खंडहरों से 10 किलोमीटर दूर राजगीर में करीब 500 एकड़ भूमि में विस्तारित नालन्दा विश्वविद्यालय की स्थापना 25 नवम्बर 2010 को किया गया है। आज भी यहाँ विदेशों से शोध कार्य के लिए छात्र आ रहे हैं।

संदर्भ सूची

1. मुंशी, के. एम. व मजूमदार, आर. सी. (1984), *भारतीय जनता का इतिहास और संस्कृतिः श्रेण्य युग,* हिन्दी अनुवाद द क्लासिकल एजः हिस्ट्री ऐण्ड कल्चर ऑफ द इण्डियन पीपल, प्रकाशक, मोतीलाल बनारसी दास, पृ. 470।
2. पाण्डेय, धनपति (1988), *'प्राचीन भारत का राजनीतिक और सांस्कृतिक इतिहास',* प्रकाशक, मोतीलाल बनारसी दास, पृ. 191।
3. वाटर्स, युवानच्वांग, भाग 2, बील, लाइफ ऑफ ह्वेनसांग, पृ. 109।
4. अल्टेकर, ए. एस. (1934), *एजुकेशन इन ऐंन्शियन्ट इण्डिया,* दिल्ली, ईशा बुक्स, पुनर्मुद्रित 2009, पृ. 117।
5. सिंह, आशुतोष कुमार. (2018), प्राचीन भारतीय शिक्षा के केन्द्र के रूप में नालन्दा का महत्व, *Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika,* P: ISSN NO.: 2321-290X, E: ISSN NO.: 2349-980X, VOL-5, ISSUE-8, April- 2018.
6. बाल एस. (1911) लाइफ ऑफ ह्वेनसांग, लंदन पूर्वोक्त, पृ. 111–112।
7. विद्याभूषण, *हिस्ट्री ऑफ इण्डियन लॉजिक,* पृ. 561।
8. वाटर्स, युवानच्वांग, भाग 2, पूर्वोक्त, पृ. 112।
9. लुणिया, बी.एन. (2010–11), *प्राचीन भारतीय संस्कृति,* प्रकाशक, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा, पृ. 714।
10. सहाय, शिवस्वरुप (2000), *प्राचीन भारत का सामाजिक एवं आर्थिक इतिहास,* प्रकाशक, मोतीलाल बनारसीदास, पृ. 240।
11. लुणिया, बी.एन. (2010–11), *प्राचीन भारतीय संस्कृति,* प्रकाशक, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा, पृ. 715।
12. वाटर्स, युवानच्वांग, भाग 2, पृ. 164–165; बील, लाइफ ऑफ ह्वेनसांग, पृ. 110–113।
13. इत्सिंग, रेकर्ड, पृ. 65, 154–155।
14. लुणिया, बी.एन. (2010–11), *प्राचीन भारतीय संस्कृति,* प्रकाशक लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा, पृ. 715–716।

****